NJESR/May-2026/Volume-8/Issue-5 **E-ISSN-2582-5836**

DOI-10.53571/NJESR.2026.8.4.1-7

समकालीन भारतीय चित्रकला मे लोक तथा परम्परागत प्रवृत्ति एवं प्रतीकात्मकता

डॉ. शंकर शर्मा

सहायक आचार्य

चित्रकला विभाग, से.म.बि. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,

नाथद्वारा, राजस्थान, भारत

(Received -15April 2026/Revised-28April 2026/Accepted-1May 2026/Published-4 May 2026)

सारांश

कला चाहे किसी भी देश या काल की हो, वह निश्चित रूप से तत्कालीन समाज की प्रवृत्तियों की वाहक होती है। भारतीय कला की विभिन्न प्रवृत्तियाँ भी इसी तरह समाज से ही प्रस्फुटित और विकसित हुई हैं जिनमें इसकी केन्द्रीय सोच को ही कलाकारों ने विभिन्न प्रयोगों द्वारा मूर्त व अर्मूत रूपाकारों के साथ दर्शनीय बनाया। भारतीय कला के सन्दर्भ में एक सबसे प्रमुख बात यह है कि यह विभिन्न युगों में कई विदेशी प्रभावों के सम्पर्क में आयी, तथापि आज भी अपनी मौलिकता के साथ इन प्रभावों को आत्मसात् करते हुए अपना निजस्व लिये दिखाई देती है। सामान्यतः समकालीन भारतीय कलाकारों की दो मुख्य प्रवृत्तियाँ रही हैं। (1) आकृतिमूलक तथा (2) अर्मूत, आकृतिमूलक कलाकारों ने अपनी कला में अतियथार्थवादी, अभिव्यंजनावादी अथवा देशज तथा लोक शैलियों के तत्त्वों को स्थान दिया है तो अर्मूत प्रवृत्ति वाले कलाकार ज्यामितीय रूपों, तांत्रिक प्रतीकों अथवा विशुद्ध अर्मूत कला के सिद्धान्तों का आश्रय लेकर सृजन्रत हैं।

कूटशब्द : अतिरंजना – अतिश्योक्ति, बढा–चढाकर कहना : वीभत्स – घृणांस्पद, निंदनीय : मेटामार्फोसियस – कायापलट, रूपान्तरण : सधुक्कड – साधुओ सा, साधुओ की तरह

आज कलाकारों का एक ऐसा वर्ग समकालीन भारतीय कला जगत में दिखाई देता है, जो लोककला तथा परम्परागत कला से प्रेरित है, पर आधुनिकता लिये है। यह वर्ग पारम्परिक ऊर्जा से सम्बल ग्रहण कर अपनी कला को समकालीन संदर्भों में नया रूप देने में लगा है।

नीरॉद मजूमदार, एम. एफ. हुसैन, गुलाम मुहम्मद शेख, मोहन सामन्त, भूपेन खक्कर, जे. सुल्तान अली, सुरुचि चांद, श्रीनिवासलु नृसिंहमूर्ति, के. ए. आदिमूलम, आर. बी.

भास्करन, एस. जी. वासुदेव आदि समकालीन भारतीय कला–जगत के ऐसे ही कलाकार हैं, जिनकी कला में परम्परागत लघु–चित्रण शैली, लोक–कला तथा आदिम कला के प्रति एक आस्था रूप लिये दिखाई देती है।

इन कलाकारों ने परम्परागत कला व लोक कला की प्रतिरूपण व प्रतीकात्मक प्रवृत्तियों को अपनी कला में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है तथा रेखाओं तथा रंगों से उत्पन्न मनोवैज्ञानिक प्रभाव व आवेशयुक्त तल विभाजन की भारतीय कला विशेषताओं के साथ परम्परागत विषयों को भी समकालीन सन्दर्भों में प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त लोक जीवन में व्याप्त प्रतीकों को भी इन्होंने अपनी कला में प्रयोग कर उन्हें नया जीवन दिया है।

जहाँ तक लोक तथा परम्परागत कलाओं में प्रतीकात्मक प्रस्तुतीकरण का प्रश्न है तो यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि यह कलाएँ अपने मूल स्वरूप में ही प्रतीकात्मक रही हैं। इसकी पुष्टि लोक तथा परम्परागत चित्रण शैलियों तथा प्रतीकवादी सृजन्–विधान की तुलना करने से हो सकती है।

लोक तथा परम्परागत कलाएँ अपने में उन विशेषताओं को लिये हुए हैं, जो दर्शन में उन्हें वास्तविकता अथवा यथार्थ से अलग प्रतीकात्मक रूप प्रदान करती हैं। लोक कलाओं में निहित ये विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

1. सरल ब्रह्मा रेखा के प्रति आग्रह । प्रतिरूपात्मक प्रवृत्ति ।
2. रंगों का घनत्व (आयामों का सरलीकरण) (छाया का अभाव)
3. अभिव्यंजना के उद्देश्य से मुद्राओं में अतिरंजना तथा महत्त्व के अनुसार वस्तुओं का आकार।
4. अभिप्रायों अथवा रूढ़ रूपों को आलंकारिक ढंग से विशेष रूप देने की प्रवृत्ति।
5. रेखाओं, आकृतियों अथवा बिन्दुओं की पुनरावृत्ति द्वारा लयात्मकता की सृष्टि।[1]

इसी प्रकार परम्परागत कला भी कुछ ऐसी ही विशेषता लिये है।यथा –

1. सपाट व द्विआयामी आकृतिकरण
2. मनोवैज्ञानिक रंग–योजना
3. ज्यामितीय तल विभाजन
4. विषय–वस्तु की प्रधानता

5. अलंकरण की प्रवृत्ति

लोक तथा परम्परागत कला की इन विशेषताओं को यदि प्रतीकवादी सृजन्–विधान की इन मान्याताओं के साथ तुलना की जाए जिसमें कलाकृति की विशेषताएँ बताते हुए कहा गया है कि वह –

1.भावात्मक हो, क्योंकि उसका प्रयोजन एक भाव को व्यक्त करना है।

2.वह प्रतीकात्मक हो, क्योंकि वह भाव को रूपाकार के माध्यम से प्रकट करेगी।

3.वह संश्लेषणात्मक हो, क्योंकि वह उन रूपाकारों को सामान्य प्रेषणीय उपकरण में घटित करेगी।

4.विषयपरक हो, क्योंकि उसमें विषय, विषय रूप में न हो कर कलाकार द्वारा गृहीत भाव–संकेत के रूप में होगा।

5.वह अलंकरणात्मक हो, क्योंकि उपर्युक्त विशेषताएँ ही आलंकारिककला की विशेषताएं हैं।[2]

तो हमें लोक कला व परम्परागत कला–विधान व प्रतीकवादी सृजन्–विधान में कोई स्पष्ट वैविध्य नहीं दिखाई देता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लोक तथा परम्परागत कलाएँ अपने मूल में प्रतीकात्मक गुणो को लिये हुए है।

लोक तथा परम्परागत कला प्रवृत्ति वाले प्रमुख चित्रकार

हुसैन: हुसैन की कला में परम्परागत लघु चित्रणकला, आदिम कला व लोककला का समन्वित रूप दिखाई देता है जहाँ उनके चित्रों में धरातलीय विन्यास लघु चित्रों का आधार लिये है, वहीं रंगों के प्रतीकार्थ परम्परा से प्रभावित दिखाई देते हैं। साथ ही हाथ की छाप, सर्प आदि लोककला की प्रतीक आकृतियाँ भी उनके चित्रोंमें दिखाई देती हैं। यदि उनकी सम्पूर्ण कला का विश्लेषण करें तो हम पाते हैं कि समन्वित रूप में दक्षिणी, गुजराती, राजस्थानी कलाओं के रंग, रेखांकनो तथा फोटोग्राफिक यथार्थवाद के अद्भुत मेल से उनकी कला चेतना का निर्माण हुआ है, जिसे उन्होंने मुक्त व गहरे रंगों की रेखाओं तथा सशक्त तूलिकाघातों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।[3] (चित्र संख्या 1)

(चित्र संख्या 1)

गुलाम मुहम्मद शेख: गुलाम मुहम्मद शेख का चित्रात्मक प्रस्तुतीकरण जहाँ तकनीकी रूप से परम्परागत भारतीय लघु चित्रण शैली से प्रभावित दिखता है, वहीं उनके चित्र अपनी अंतरात्मा से भी भावुक भारतीय हृदय की अभिव्यक्ति ही है। इसमें समकालीन समाज का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, जो कहीं शहरी सभ्यता के बीच शोषण के कठोर वातावरण में असहाय होते जा रहे आज के आम आदमी को दर्शाता है तो कहीं आधुनिक शहर की हलचल भरी जिन्दगी में होने वाले वीभत्स व्यापारों को। (चित्र संख्या 2)

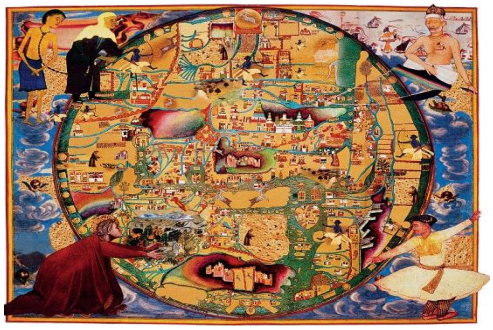

(चित्र संख्या 2)

मोहन सामन्त: इनके चित्रों में रंग तथा आकार परम्परागत भारतीय कला से पर्याप्त प्रभावित रहे हैं। जहाँ वे रंगों का प्रयोग चित्रों में भावों की दृष्टि से उनके प्रतीकात्मक प्रभावों को ध्यान में रखकर करते हैं वहीं आकारों का अनुपात भी यथार्थ पर आधारित न होकर विषय निरूपण के आधार पर होता है। यह प्रतीकात्मकता अजंता की परम्परा का निर्वाह करती प्रतीत होती है, जैसा कि उनके चित्र ''रेड कारपेट'' से स्पष्ट है, जिसमें मानव युगल को हरित, सुनहरे एवं पीत लाल रंग प्रवाह में प्रणय मुद्रा में खड़े दिखाया गया है, चित्र के दाहिनी ओर पोस्त के सुन्दर पुष्प जैसी, लेकिन उससे भी बड़ी आकार की वस्तु को दर्शाया गया है तथा पैरों के अधोभाग के नीचे लाल रंग की चटाई एक नदी जैसी बहती दिखाई गई है, जिसमें अनेक स्त्री, पुरुष आकृतियाँ विविध मुद्राओं में चित्रित हैं।[4] यह एक ऐसा प्रतीकात्मक चित्र है, जिसमें मिनिएचर शैली का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। विशेष कर रंग के आकारों की प्रस्तुति में। इसी प्रकार का प्रतीकात्मक प्रस्तुतीकरण उनकी कला की प्रमुख विशेषता रही है।

भूपेन खक्कर : भूपेन खक्कर के चित्रों में मोटरों, बसों, स्कूटरों, साईकिलों, शहरी इमारतो, सड़कों, बिजली के खम्भों, तारों आदि का सरलीकरण परम्परागत भारतीय कला में आकारों के सरलीकृत रूपों की प्रवृत्ति के आधार पर किया जान पड़ता है। पर उनके चित्रों में रेखा व रंगों का प्रयोग प्रतीकात्मक न होकर यथार्थवादी पृष्ठभूमि के आधार पर किया

गया है, जो कि उनकी कला को प्रतीकात्मक गुणों से मुक्त करता है । यद्यपि सम्पूर्ण चित्र के प्रभाव से उत्पन्न भावपूर्ण मनःस्थिति उनकी कला को अवश्य प्रतीकात्मक बनाती है।

शैल चोयल : परम्परा व आधुनिकता का उचित समन्वय शैल चोयल के चित्रों की प्रमुख विशेषता रही है। इनके चित्र जहाँ परम्परागत चित्र–शैली से पर्याप्त प्रभावित रहे हैं, वहीं आधुनिकता के प्रति प्रबल आग्रह भी इनके चित्रों में दिखाई देता है। लघु–चित्रों की प्रतीकात्मक व सपाट रंग–योजना व ज्यामितीय तल विभाजन की विशेषताएँ इनके चित्रों में देखी जा सकती है। लेकिन रेखाओं का प्रयोग इन्होंने आधुनिक दृष्टि से किया है जिसमें 'समुच्य' रेखाओं का प्रयोग अधिक हुआ है, जिनके साथ ही 'टेक्सचर्स' भी नवीनता लिये रहते हैं। 'कमल' इनके कई चित्रों में प्रमुख अभिप्राय के रूप में प्रस्तुत हुआ है, जिसके पीछे ये नाथद्वारा की 'पिछवाई' परम्परा का प्रभाव मानते हैं। इन पिछवाइयों में यह कमल 'कृष्ण' का प्रतीक रहा है। पर चोयल के चित्रों में यह कृष्ण रूपी 'प्रेम' का प्रतीक बनकर आया है। वैसे प्रेम इनके चित्रों की प्रमुख 'थीम' रही है, जिसका उदाहरण इनकी 'मेटामार्फोसियस' चित्र श्रृंखला है जिसमें स्त्री व पुरुष के प्रेम के विविध रूप पशु व मानव आकृतियों द्वारा प्रस्तुत किये गए हैं। इनमें बताया गया है कि किस प्रकार प्रेम प्रकृति की प्राप्ति हेतु पशु मनुष्य व मनुष्य पशु रूपों में परिवर्तित होता रहता है। इसी प्रकार की प्रतीकात्मकता लिये इनका एक अन्य चित्र है, जिसमें नायक पंतग उड़ा रहा है व नायिका पंतग को 'छुट्टी' दे रही है। इस चित्र के सन्दर्भ में इनका कहना है कि पंतग यहाँ प्रेम का प्रतीक है, जिसकी डोर नायक व नायिका को एक दूसरे से बांधने का कार्य कर रही है। इसी प्रकार की प्रतीकात्मक प्रस्तुति प्रायः इनके सभी चित्रों में दिखाई देती है। (चित्र संख्या 3)

(चित्र संख्या 3)

सुरुचि चाँद: सुरुचि चाँद की कला विषय व तकनीक दोनों दृष्टियों से परम्परागत भारतीय कला से पर्याप्त प्रभावित रही है, जिसमें समकालीन परिस्थितियों व विचारों का अद्भुत सम्मिश्रण किया गया है। 'आणविक ईंधन ढोते हनुमान' 'बनारस में आइन्स्टीन' आदि चित्र इसके उत्तम उदाहरण हैं। 'बनारस में आइन्स्टीन' शीर्षक के उनके चित्र में बनारस में चिलम की फूँक से ब्रह्माण्ड का विचरण करने वाले सधुक्कड़ समुदाय में आकर बैठने की विनोदी स्वभाव वाले आईन्स्टीन की जिज्ञासा उस अकर्मण्य समाज को किसी भी वैज्ञानिक अवधारणा को व्यक्त नहीं करती, बल्कि हमारी वर्तमान परिस्थितियों का उपहास करती दिखाई देती है।[5] उनकी कला में भारतीय कला की वह विशेषता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है जिसमें प्रस्तुत के माध्यम से अप्रस्तुत की व्याख्या करने की अद्भुत क्षमता निहित है।

जे. सुल्तान अली: जे. सुल्तान अली की कला में आदिम तथा लोक कला का आधार है। उन्होंने चित्रों में प्राकृतिक उपादानों को प्रतीक आकृतियों के रूप में प्रयुक्त किया है। 'साँप', 'चिडियाँ', 'सूर्य–चन्द्र', 'धरती माँ', 'बैल', 'गरुड', 'राजा' आदि की आकृतियों ने उनकी कृतियों को सीधे प्राचीन युगीन आदिमानव व उसके समाज से जोड़ दिया है। उनकी 'नागराजा', 'यादगिरी', 'दो शेर', 'नया शेर' ऐसी ही महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं जिन्हें प्रकृति से सम्बन्धित कर अपने व्यक्तित्व से जोड़कर उन्होंने नया जन्म दिया हैं, सृजन् किया है।[6]

के ए. आदिमूलम: आदिमूलम की कला में उनके जन्मस्थान के धार्मिक वातावरण व मंदिरों का विशेष प्रभाव दिखाई देता है, जो पारम्परिक शिल्पाकृतियों के आकारों के रूप में उनके चित्रों में आया है, जिसका उदाहरण उनकी कृतियाँ 'विश्राम स्थल', 'पूर्णिमा', 'राजा–रानियाँ' आदि हैं, जहाँ यह धार्मिक वृत्ति उनके चित्रण में दिखाई देती है, वहीं उनके चित्त में भी इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है, जिसको हम उनके चित्र 'ऐनीमल' के रूप में देख सकते हैं, जिसमें जीवन की स्वप्निल व अचेतन अवस्था को दर्शाया गया है।[7] मुख्य रूप से परम्परागत व परिचित आकारों का सहयोग लेकर जीवन के गूढ़ रहस्यों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति ही उनकी कला का लक्ष्य रहा है।

आर. बी. भास्करन: आर. बी. भास्करन भी अपने चित्रों में जीवन के रहस्यों को प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त करते दिखाई देते हैं। जैसा कि उनका स्वयं का कथन है ''मेरे

रेखाचित्र बताते हैं कि मैं इस समय क्या हूँ, कैसे मैं जीवन को समझता हूँ, यह जीवन की प्रक्रिया का प्रतिरूप है।''[8] उन्होंने अपनी कला में जीवन के अस्तित्त्व, उसका विकास तथा मृत्यु की प्रक्रिया जैसे गूढ़ विषयों को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

एस. जी. वासुदेवः इन्होंने 'प्रेम' को अपने चित्रों में विविध रूपों में व्यक्त किया है, जिसमें कभी मानव तो कभी पशु तो कभी पहाड़, सूर्य, चन्द्रमा उनके प्रतीक बने हैं। रचनात्मक दृष्टि से लोककला शैली से प्रेरित अपने प्रेम–विषयक चित्रों को उन्होंने 'मिथुन' शीर्षक दिया है, जिस सम्बन्ध में वे कहते हैं– ''मिथुन क्रिया यह नर–नारी के बीच एक प्रेम व्यापार नहीं है, यह सभी रूपों में प्रेम की विशाल भावना है, जो नक्षत्रों और पृथ्वी, पर्वत और समुद्र, वृक्षों और पक्षियों, जीवन व जन्तुओं और जानवरों के बीच है।''[9] वर्तमान में वे यह 'वृक्ष' की आकृति को प्रतीक के रूप में लेकर सृजन् कर रहे हैं।

इन सभी कलाकारों के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रमुख कलाकार भी हैं, जो परम्परागत तथा लोक शैलियों में निहित आकारों, रंगों व प्रतीकों को समकालीन सन्दर्भों में एक नया स्वरूप प्रदान कर अपने विचारों को मूर्त रूप देने में सृजन्रत हैं। इनमें प्रभा शाह, श्रीनिवासलु, डी. बुद्धि, शीला ओढ़ेन, भगवान कपूर आदि प्रमुख हैं, भारतीय दृष्टि से प्रभावित इन्हीं कलाकारों के प्रयासों से आधुनिक स्तर की देशज भारतीय चित्रकला की पहचान भी विश्वकला–जगत में धीरे–धीरे बनती नजर आ रही है।

पाद टिप्पणियाँ

1. आधुनिक भारतीय चित्रकला – डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल, पृष्ठ 7
2. काव्य शास्त्र – डॉ. भगीरथ मिश्र, पृष्ठ 255–256
3. समकालीन कला – ललित कला अकादमी प्रकाशन, अंक 6, पृष्ठ 31
4. वही, पृष्ठ 32
5. वही, पृष्ठ 34
6. समकालीन कला – ललित कला अकादमी प्रकाशन, अंक 9–10,पृष्ठ 35
7. वही, पृष्ठ 39
8. वही
9. वही, पृष्ठ 40